* षष्ठ अध्याय *

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी०-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

* मिथिला के राधा-कृष्ण विषयक काव्य
का
अन्य प्रान्तों के काव्यों पर प्रभाव *

मैथिल याज्ञवल्क्य को मधु विद्या में सिद्धि प्राप्त हुई। इस शोध-प्रबन्धमें बृहदारण्यकोपनिषद् कथित मधु विद्या का विवेचन किया गया है। मैथिल याज्ञवल्क्य ने आत्मा की सर्वप्रियता सिद्ध की है। आत्मा के कारण सबसे प्रेम का सम्बन्ध जोड़ा जाता है। मधु-विद्या के विवेचन क्रम में ऋषि का कथन है कि यह आत्मा सारे प्राणियों के लिए मधु है और सारे प्राणी आत्मा के लिए मधु है :

-"अयमात्मा सर्वेषां भूतानां मध्वस्य,
आत्मा सर्वाणि भूतानि मधुयस्य ।"

वस्तुत: जीव और ब्रह्म में मधुर संबंध की स्थापना के पश्चात् जीवन-समुद्र में आनन्द की अप्रतिम तरंगों का उत्थान होता है। रंजन के देवता कृष्ण का माधुर्य वेद, पुराण

सम्मत है । नैसर्गिक कहा जा चुका है, कृष्ण का कृष्णत्व इन्द्रियाकर्षि के रूप में ही प्रकट होता है । राधा कृष्ण की प्रमुख आनन्द प्रसारिणी शक्ति है । यह भी कहा जा चुका है कि राधा कृष्ण विषयक प्रेम की अष्ट अन्तर्दशाओं में महाभाव अन्तिम दशा है । इस महाभाव की दो कोटियाँ -मोदन और मादन है । मोदन स्थिति राधा कृष्ण में सम्भव है और इसीलिए विरह में कृष्ण को मोहन कहा जाता है । मादन रूप भाव की एकमात्र अधिष्ठात्री राधा है जिनके जीवनाकाश में प्रेम का दीप्य विवस्वान सतत् भास्मान है ।

मिथिला दर्शन और भक्ति की सिद्धस्थली के रूपमें विश्व विश्रुत है । यहाँ के विद्वानों ने कवित्व और पाण्डित्य से पूर्ण जननी सरस्वती के सुमधुर स्तनों का छक-छक कर पान किया है । इसीलिए मिथिलांचल के दार्शनिक प्रतिपादन विश्व के मनीषियों द्वारा मान्य रहे हैं ।

मैथिल उदयन ने स्पष्ट घोषणा की थी कि जिस ओर सूर्योदय होता है वह पूर्व दिशा है । सूर्य प्राची दिशा के अधीन नहीं हैं । उसी प्रकार मैं जो दार्शनिक प्रतिपादन करता हूँ वही सत्य है ।

भावोपासना की दृष्टि से मैथिल उदयन ने जगन्नाथ को डाँट दिया था । दर्शन के अतिरिक्त मिथिला की भावोपासना अप्रतिम मानी गई है । यह मिथिला आद्या की प्रसवस्थान है । इसीलिए यहाँ शक्ति समन्वित उपासना के विविध रूप दृष्टिगत होते हैं । कहा जाता है कि सर्व प्रथम मैथिल बोधायन ने भी विशिष्टाद्वैतवाद का प्रतिपादन किया था जिसका सम्यक विवेचन आचार्य रामानुज ने किया । भक्ति का दर्शन विशिष्टाद्वैत-वाद भी है जिसमें अवतारी ब्रह्म की उपासना का विवेचन किया गया है ।

अवतारी ब्रह्म की रंजन प्रवृत्ति को लेकर कृष्णोपासना प्रचलित हुई और मि-

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी०-एच०डी०, शोध प्रबन्ध

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी०-एच०डी०, शोध प्रबन्ध

मैथिल कोकिल विद्यापति इस उपासना के सर्वसमर्थ कवि हुए । मिथिला के राधा विषयक काव्य का अन्य प्रान्त के काव्यों पर प्रभाव के वर्णन के लिए प्रमुखत: विद्यापति के प्रतिभा का ही विवेचन करना होगा । इस प्रतिभा के आलोक में अन्य प्रान्त के कवियों ने अपनी काव्य-साधना प्रस्तुत की । यहाँ सर्वप्रथम महाकवि विद्यापति के प्रभावों का ही वर्णन किया जा रहा है ।

बंगला साहित्य पर मैथिली का प्रभाव :

बंगाल में वैष्णव पुनर्जागरण कृष्ण-भक्ति का ही प्लावन है । अत्यन्त प्राणवत्ता के साथ आविर्भूत होकर कृष्ण-भक्ति ने बंगीय साहित्य को माधुर्यमण्डित किया है ।

यह सत्य है कि कृष्ण-भक्ति को महाप्रभु चैतन्य ने उपासना के धरातल पर उन्नीत किया, किन्तु उनके पूर्व भी लीला गान की परम्परा थी । बंगाल में भक्ति के दो युग है,-चैतन्यपूर्व और चैतन्योत्तर ।

महाप्रभु चैतन्य द्वारा समादृत जयदेव, विद्यापति और चण्डीदास ने बंगीय साहित्य को अभिनव प्रेरणा दी । इन महाकवियों के प्रभाव से हिन्दी कृष्ण-काव्य भी अस्पृश्य नहीं रहा ।

"वैष्णव कवि चूड़ामणि" के रूप में विद्यापति का बंगीय साहित्य एवं संस्कृति में ऐसा प्रवेश हो गया कि बहुत दिनों तक उन्हें बंगाल का ही अधिवासी माना जाता था। विद्यापति को मृत्युंजयत्व देने वाले उनके राधा-कृष्ण विषयक पद ही हैं । इन्हीं पदों के कारण विद्यापति "विद्यापति" हैं । विद्यापति के पदों का संकलन करने वाले सभी आधुनिक विद्वान् बंगीय वैष्णवों के ऋणी हैं, जिन्होंने महाकाल के प्रवाह में विलीन होने से उन्हें बचाया ,

पवित्रन्यास के रूप में उनकी रक्षा की ।

बंगीय वैष्णव-साहित्य में चण्डीदास का स्थान सर्वोपरि है, किन्तु चण्डीदास के बाद द्वितीय स्थान विद्यापति को ही प्राप्त हुआ । गौरांग महाप्रभु द्वारा समादृत होकर विद्यापति के पद एक नूतन मूल्यबोध में भास्वर हुए, उन्हें गौड़ीय वैष्णवों में असाधारण लोकप्रियता प्राप्त हुई । विद्यापति की पदावली में ही बंगीय वैष्णव ऐतिह्य का उन्मेष हुआ । श्री हरिवल्लभ (विश्वनाथ चक्रवर्ती) द्वारा अष्टादश शताब्दी के प्रथम चरण में संचयित "क्षणदा चिन्तामणि"[1], अष्टादश शताब्दी के मध्य में श्री निवास आचार्य प्रभु के वंशधर एवं इतिहास-प्रसिद्ध महाराजा नन्द कुमार के गुरु श्री राधामोहन ठाकुर द्वारा संकलित, "पदामृत सिन्धु",[2] अष्टादश शताब्दी के शेषार्ध में श्री वैष्णवदास (गोकुलनन्द सेन) द्वारा सम्पादित "श्री श्रीपदकल्पतरु"[3], एवं श्री दीनबन्धुदास द्वारा संकलित "संकीर्तनामृत" में विद्यापति के पद राधा-कृष्ण-भक्ति के सरस उत्स के रूप में संकलित हैं । "पदरससार"[4], "पदकल्पलतिका", "गौरपदतरंगिणी", पदरत्नावली" प्रभृति अन्य वैष्णव पद संकलनों में भी विद्यापति के पद उपलब्ध हैं । उल्लेखनीय है कि विद्यापति के कतिपय सर्वोत्कृष्ट एवं मधुरतम

1- विद्यापति के 21 पद ।

2- विद्यापति-भणित के 64 पद ।

3- विद्यापति-भणित युक्त 161 पद, इनमें 14 पद मिथिला एवं नेपाल से प्राप्त हुए पाण्डुलिपियों में भी सुरक्षित हैं ।

4- श्रीनिमानन्ददास के "पदरससार" में विद्यापति के अनेक पद संकलित हैं ।

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

पी-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

गीत, यथा- "ए भर बादर माह भादर शून मंदिर मोर", तातल सैकत वारि बिन्दु सम"; "माधव बहुत मिनती करी तोय" प्रभृत बंगला में ही सुरक्षित रहे ।

एवंविध भूगोल एवं भाषा की सीमा का अतिक्रमण कर विद्यापति बंगाल के प्रेमप्रवण हृदय में स्थायी भाव से प्रतिष्ठित हो गये । प्रेम के बल-प्रयोग से बंगाल ने विद्यापति को अपना बना लिया ।[1] यहाँ तक कि परवर्ती सहजियाओं ने उन्हें पंचरसिकजनों में परिगणित किया । परकीया-साधना के महत्त्व -प्रतिपादन में चण्डीदास और रामी के प्रेम के समानान्तर विद्यापति और लखिमा देवी के प्रणय की परिकल्पना की गई ।[2]

श्री पदकल्पतरु में विद्यापति की संस्तुति है :-

"कविपति विद्यापति मति माने ।
जाक गीते जग-चीत चोरायल,
गोविन्द-गौरि-सरस -रस-गाने ।"[3]

- -

1- "विद्यापतिर समाधि स्तम्भ उठिले विस्की रेइ उठिबे, मैथिली गण ताहाके लइया गर्व करिबेन । तबे आमादेर एकटा भालवासार आधिपत्य आछे, बंग - देशेर बहुदिनेर अश्रु, दुख ओ प्रेमेर कथा सेगतार पदावली जड़ित लइया पड़ियाछे।"

-डा० दिनेशचन्द्र सेन, बंग भाषा ओ सा०-286-7

2- श्री यदुनाथ प्रणीत "संग्रह तोषिणी" में बिल्वमंगल, जयदेव, चण्डीदास एवं राय - शेखर के साथ विद्यापति भी पंचरसिकजन में परिगणित हैं ।

3- श्री पदकल्पतरु, तृतीय खंड, चतुर्थ शाखा, पल्लव-26, पद-2386, पृ० 328

श्री नरहरिदास ने भी विद्यापति के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की है :-

"जय विद्यापति कविकुल चन्द । रसिक सभाभूषण सुख कन्द ।।"[1]

कवि कंकण मुकुन्द राम ने भी विद्यापति के प्रति श्रद्धा व्यक्त की है :-

"आद्य कवि वाल्मीकि रे करिल प्रणति ।
पराशर शुक व्यास बन्द बृहस्पति ।।
जयदेव विद्यापति बन्द कालिदास।
कर जोड़े बन्दिल पंडित कृत्तिवास ।।"[2]

चैतन्योत्तर बंगीय वैष्ण पदावली की भाषा पर मैथिली का व्यापक प्रभाव पड़ा । सन् 1199 ई० में राजा लक्ष्मण सेन के पतन के पश्चात् पूर्वीय भारत का सांस्कृतिक केन्द्र हिन्दू नरेशों द्वारा आधिशासित मिथिला में स्थानान्तरित हो गया । मिथिला में जाकर स्मृति और न्याय का अध्ययन करने वाले छात्रों ने उसके भाषागत प्रभाव को भी ग्रहण किया । उनके द्वारा बंगाल में जो मैथिली की पदावली-विशेषतः विद्यापति की मधुर एवं मर्मस्पर्शी पदावली का प्रचार हुआ । चैतन्य पूर्व बंगाल में विद्यापति के समान सरस एवं परिस्कृत भाषा वाला कोई कवि नहीं हुआ था । अतः उनके पदों को स्वीकार कर वैष्णवों ने अपनी आन्तरिक पिपासा तृप्त की । विद्यापति की भाषा ने बंगीय कवियों के समक्ष एक आदर्श उपस्थित किया,उनके मन में ऐसी ही पद-रचना अदम्य आकांक्षा जागृत हुई । परिणामतः बंगीय कवियों ने मैथिली भाषा एवं छन्द दोनों

1- क्षणदा गीत चिन्तामणि

2- मंगलाचरण, चण्डीमंगल ।

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

को ग्रहण कर एक कृत्रिम भाषा "ब्रजबुलि"[1] का विकास किया जो बंगलाएवं मैथिली का मिश्रित रूप है ।

मैथिली, बंगला, असमिया एवं ओड़िया भारत के पूर्वांचल की इन भाषाओं का आदि उत्स मागधी अपभ्रंश है, स्वभावत: इनमें किंचित साम्य है । उस युग में ये भाषाएँ और भी निकटवर्ती थीं । अत: ब्रजबुलि को असम और उत्कल के वैष्णव कवियों ने समान रूप से स्वीकार किया । असम के महान कवि शंकरदेव (मृत्यु-1568 ई०) ने सर्वप्रथम ब्रजबुलि का प्रयोग किया । असम के अंकीया नाटों में प्रयुक्त ब्रजबुलि का प्रवेश बंगला के माध्यम से नहीं, विद्यापति के प्रत्यक्ष प्रभाव से हुआ ।[2] ओड़िया में श्री रमानन्द राय ब्रजबुलि के प्रथम कवि थे । असम, उत्कल और बंग के से भक्ति काव्य में विद्यापति ने नूतन प्रेरणा एवं प्राणशक्ति का संचार किया । परवर्ती बंगीय साहित्य पर उनके गीति माधुर्य का प्रभाव विशेष रूप से परिलक्षित होता है । विद्यापति चण्डीदास से प्रभावित हुए थे, किन्तु यह प्रभाव एकांगी नहीं था । श्री वसन्तराय विद्वद्वल्लभ द्वारा आविष्कृत चण्डीदास के "श्री कृष्ण कीर्तन" पर विद्यापति का प्रभाव अन्तर्व्याप्त है । राधा के दैहिक सौन्दर्य के वर्णन में "श्रीकृष्ण कीर्तन" की अनेक पंक्तियाँ विद्यापति की पंक्तियों से अनुप्रेरित है :-

- -

1- आधुनिक युग में ब्रजबुलि अभिधा का सर्वप्रथम प्रयोग ईश्वरचन्द्र गुप्त ने किया । किन्तु ब्रजबुलि अभिधा सर्वथा नवीन नहीं है । असम के महान कवि शंकरदेव के शिष्य माधवदेव (षोडश शताब्दी) द्वारा "ब्रजावली" प्रयुक्त हुआ है । सम्भवत: "ब्रजावली" का ही विकसित रूप "ब्रजबुलि" है--ब्रजावली - ब्रजाली बुलि -ब्रजबुलि ।

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

1. चण्डीदास : "कनक कुम्भ आकारे दुई तोर पयोधारे
ताहात उपर गजमुकुतार हारे ।
जेन्ह शोभ करे सुमेरु गंगाधारे ।"[1]

2. विद्यापति :

"पीन पयोधर अपरुब सुन्दर उपर मोतिम हार ।
जनि कनकाचल उपर विमल जल दुइ बह सुरसरिधार ।।"[2]

× × × ×

"काम कम्बु भरि कनक-सम्भु परि ढारत सुर धुनि धारा ।"[3]

2. चण्डीदास :

"केशपाशें शोभे तार सुरंग सिन्दूर ।
सजल जलदे जेन्ह उदल नव सुर ।।"[4]

विद्यापति :

"सुन्दर बदन सिन्दुर बिन्दु सामर चिकुर भार ।
जनि रवि ससि संगहि उगल पाछु कए अन्धकार ।।"[5]

1- श्रीकृष्ण कीर्तन,दानखण्ड,पृ०-52

2- विद्यापति पदावली -वि० रा० प०,पद-9,पृ०-596

3- विद्यापति पदावली -मित्र मजुमदार -पद-625,पृ० 596

4- श्री कृष्ण कीर्तन,ताम्बूल खण्ड- पृ० 5

5- विद्यापति पदावली- वि० रा० प०,पद,37,पृ०253

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

संभोग शृंगार के सम्बन्ध में विद्यापति की अनेक पंक्तियाँ चण्डीदास की पं-क्तियों में प्रतिध्वनित है :

1. विद्यापति :

"बढ़िले जौवन तोहे देब दान ।[1]

चण्डीदास :

" जेखानो रति आनिबाँ ।सेखाने कान्ह आमिबो ।[2]

2. विद्यापति :

कबु नहि सुनिए सुरतक बात ।[3]

चण्डीदास : रतिकथा सखि मुखे ना शुनिलों काने ।[4]

नौका विलास के पश्चात् विद्यापति की रति लक्षिता राधा अपनी स्थिति की सफाई देती है :

"हरि नरि वैसे भाखिल नाइ ।धरए न पारधि बाल कन्हाइ ।।
तैं धसि धमुना गेलहुँ पार । फूटल बलया टूटल हार ।।
ए सखि ए न बोल मन्द । विरह बवने बाढ़ल दन्द ।।
कुन्तल खसल जामुन माझ । ताहि जोहइते पड़लि साँझ।।
अलक तिलक तैं बहि गेल । कुच सुधाकर बढ़ल गेल ।।
हरिनी टट न पाइअ बाट । तैं कुच गाड़ल कठिन काँट ।।
भने विद्यापति निअ अवसाद ।बचन कउसले जितिअ वाद ।।

1- विद्यापति पदावली-मित्र मजुमदार,पद-684,पृ0 429
2- श्रीकृष्ण,ताम्बुल खण्ड-पृ0 9
3- विद्यापतिर पदावली- मित्र मजुमदार,पद-673 पृ0423
4- श्री कृष्ण कीर्तन-दान खण्ड,पृ0-18

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

नौका विलास के पश्चात् श्रीकृष्ण कीर्तन की राधा भी सफाई देती है :

"कथी दूर खआइले नाअ चक्रपाणि ।
आमर नाअ नेल वारि पासे पानी।।
बड़ाई बड़ भय पाइलौं जमुनार जले।
पार कैल नौके भाले कान्हपिं गोआले।।
गालरभस राधा पैला आभारने ।
पानिं फूटि भार आ क कुइल कान्हे ।।
आचम्बित हरतर बाहि लेक बाप ।
मांझ जमुनार डुबियाँ गेल नाअ ।।[1]

पूर्वोक्त पंक्तियों में चण्डीदास विद्यापति का अनुगमन करके भी वैसी सरसता के संचार में असमर्थ रहे हैं ।

विप्रलम्भ श्रृंगार के वर्णन में चण्डीदास की अनेक पंक्तियों के प्रेरणा स्रोत विद्यापति की पंक्तियाँ हैं :

चण्डीदास : मुकलिल आम्ब साहारे । मधु लोभे भ्रमर गुंजरे ।।
डाले बसी कुइली काढ़ेराए । जेन्ह लागे कुलिशेर धार ।।[2]
आम्ब डाले बसी कुयिली कुहले लागे विषबाण धार ।"[3]

1- श्रीकृष्ण कीर्तन-नौका खण्ड,पृ0-65

2- श्रीकृष्ण कीर्तन,राधा विरह-पृ0-135

3- " " वंशी खण्ड -पृ0- 116

विद्यापति : साहर मजर भमर गुजर कोकिल पंचम गाब ।

दखिन पवन विरह वेदन निठुर कन्त न आब ।।[1]

चण्डीदास : चाँद सुरजेर भेद ना जानो चन्दन शरीर तार ।[2]

विद्यापति : चाँद सुरज विशेष न जानए चान्द नै मानए साती ।[3]

चण्डीदास : दिन पाँच सात सतत लागिया सुसुम पोड़नि सारे ।[4]

विद्यापति : छिला एक सुनाह समागम पाओल मास बरख भेल साति ।[5]

निष्कर्ष में चण्डीदास ने अनेक स्थानों पर "जनि" शब्द का प्रयोग किया है। यह शब्द बंगला नहीं मैथिली है । विद्यापति ने अनेक स्थानों पर "जनि" शब्द का प्रयोग किया है ।

विद्यापति :

चन्दा जनि उग आजुक राति ।[6]

चण्डीदास :

पाछे जनि लोक उपहासे ।[7]

1- विद्यापति पदावली, बि० रा० प०, पद 190, पृ०-438

2- श्री कृष्ण कीर्तन-वंशी खण्ड-पृ० 116

3- विद्यापति पदावली-बि० रा० प०, पद 214, पृ० 417

4- श्रीकृष्ण कीर्तन- राधा विरह, पृ०-137

5- विद्यापति पदावली-बि० रा० प०, पद 189, पृ०-437

6- विद्यापतिर पदावली, मित्र मजुमदार, पद 316, पृ० 212

7- श्री कृष्ण कीर्तन -वंशी खण्ड-पृ० 229

गोविन्ददास ने छन्दसंगीत एवं भाव माधुर्य में ब्रजबुलि काव्य को चरमोत्कर्ष दिया । "श्रीमद्कल्पतरु" में गोविन्ददास की वन्दना है :

"जय कविराज-राज रस सायर
श्री गुरु गोविन्ददास ।
ऐसन कबिहु ना हेरिए त्रिभुवने
प्रेम मुरति परकाश ।।
जाकर गीते सुधारस बरिखये
कविगण चमकए चीत ।
सुनइते गर्ब्बे खर्ब्ब सब होयत
ऐछन रसमय गीत ।[1]

सुप्रसिद्ध वैष्णव कवि ज्ञानदास की पदावली में भी विद्यापति का प्रभाव अन्तर्व्याप्त है । छन्द,उपमा,वर्णन-भंगी प्रभृति में ज्ञानदास ने प्रारम्भ में विद्यापति के ही आदर्श का अवलम्बन किया । प्रथम यौवनाविर्भाव में देह-छन्द के साथ मानस-छन्द के चित्रण में ज्ञानदास ने विद्यापति का अनुगमन किया है ।

"खेलए ना खेलए लोक देखि लाज ।
हेरए ना हेरए सहचरि माँझ ।।
बोलइते वचन अलप अब गाइ ।
हासए ना हासए मुख मुचकाइ ।।
ऐ सखि ऐ कीछि देखलुं नारी ।
हेरइते हरखे हरल जुग चारी ।।[2]

- -

1- श्री पदकल्पतरु,प्रथम खण्ड,प्र० शाखा,प्र० पल्लव,पद-18,पृ०-15
2-ज्ञानदास गीत पंजीकरण,पृ०-414

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।
पी-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

"श्रीगीतचन्द्रोदय" में उद्धृत ज्ञानदास के पूर्वोक्त पद के प्रारम्भिक दो चरण विद्यापति से गृहीत हैं। शेष चार चरण अवश्य ज्ञानदास के स्वरचित हैं। यौवनोन्मेष में ज्ञानदास की अनभिज्ञा राधा विद्यापति की वयः सन्धि-प्राप्त राधा की तरह ही रसालाप श्रवण में उत्सुक है :

विद्यापति :

केलिक रभस जब सुने ।

अनतए हेरि ततहि दए काने ।।[1]

ज्ञानदास :

विपरीत वचन कहु वहत विशेष ।

राइ को हृदये देखल रसलेश ।।[2]

कि कहब माधव बुझाई ना पार ।

किए धनी बाला किए परनारि ।।[3]

ज्ञानदास की पूर्वोद्धृत पंक्ति स्पष्टतः विद्यापति की निम्नोक्ति पंक्ति से प्रभावित है :

"को कहे बाला को कहे तरुणी ।।"[4]

विद्यापति के अनुसरण में ज्ञानदास ने भी नवोढ़ा -मिलन के वर्णन में विह्वलता यौवन की वासना के उच्छ्वास को सन्निहित किया है :

1- विद्यापतिर पदावली-मित्र मजुमदार,पद-616,पृ0-399

2- क्षणदा गीत-चिंतामणि-3115

3- ज्ञानदासेर पदावली,पृ0-36,श्रीमद्कल्पतरु,खंड 1,शाखा-1,पल्लव-4,पद,79,पृ0-60

4- श्रीपदकल्पतरु,खण्ड-1,पल्लव-5,पद-105,पृ0 77

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

विद्यापति : बदर सरिस कुच परसब लहु ।

कत कुरत पाओब करित उहु उहु ।।[1]

ज्ञानदास : उरज उठल जनु बदरि ।

करेजनि काँपह सगरि ।।[2]

विद्यापति : काँच कमल भमरा झिकझोर ।[3]

ज्ञानदास : कलिका कमल भ्रमर नह भेलि ।[4]

विद्यापति के अनुकरण में ज्ञानदास द्वारा दृष्टि कूट के पद भी प्रणीत हुए, यथा-

"सजनि की पेखनु नीप मूले चन्द ।"[5]

अपने मधुर संगीत के लिए विख्यात वसन्तराय ने विद्यापति की भणित से ही पद-रचना प्रारम्भ की । उनके पश्चात् अनेक बंगीय वैष्णव कवियों ने अपने पंगु पदों को भी विद्यापति के भणित से चला दिया ।

आधुनिक युग में महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर विद्यापति से अनुप्राणित हुए । अदम्य जिज्ञासा से प्रेरित हो किशोरावस्था में उन्होंने विद्यापति के मर्म में प्रवेश पाने की चेष्टा की :

1- विद्यापति पदावली, बि. रा. प., पद-45, पृ0-57

2- ज्ञानदासेर पदावली -

3- विद्यापतिर पदावली-मित्र मजुमदार, पद-282, पृ0-194

4- ज्ञानदासेर पदावली, पृ0 22

5- " "

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी-एच०डी०, शोध प्रबंध

"विद्यापतिर दर्बोध विकृत मैथिली पद गुलि अस्पष्ट बलियाइ बेशिकरिया आमार मनोजोग टानित । आमि टीकार ऊपर निर्भर ना करिया निजे बुझिबार चेष्टा करिताम । विशेष कोनो दुरूह शब्द जे खाने जतबार व्यवहृत हइयाछे समस्त आमि एकटि छोटो बान्धानों खाताय नोट करिया राखिताम : व्याकरणेर विशेषत्व गुलिओ आमार बुद्धि अनुसारे जथा साध्य टुकिया राखिया छिलाम ।"[1]

रवीन्द्रनाथ विद्यापति काव्य के गम्भीर अध्येता थे । "चण्डीदास ओ विद्यापति " शीर्षक निबन्ध में दोनों महाकवियों का तुलनात्मक अध्ययन कर उन्होंने गहन अन्तर्दृष्टि का प्रमाण दिया है ।[2] साधना में प्रकाशित उनका प्रभावाभिव्यंजनावादी निबन्ध-"विद्यापति राधा" भी इस क्रम में उल्लेखनीय है ।[3]

विद्यापति की मधुर पदावली में रवीन्द्रनाथ की विशेष अनुरक्ति थी । नूतन वर्षा के समागम पर उनके हृदय में विद्यापति का गीत प्रतिध्वनित हुआ था :

"नूतन वर्षा नेमेछे । मेघेर छाया मे से बसेछि छादेर ऊपर देउ देखिए मेघेर छाया कालो करे धनिये से छिओ पारे बनेर माथाय । अनेक बार एइ दिने निजे गान तैरि करेछि से दिन ता होलोना । विद्यापति पदरि जेगे उठल आमार मने"ए भरा बादर,माह भादर शून्य मन्दिर मोर" निजेर छाप दलाई करे रागिनीर छाप भरे ताके निजे करे निलुम ।"[4]

1- छेटर पढ़ा,जीवन स्मृति,पृ0-64।

2- भारती फाल्गुन-1282,बंगाब्द,पृ0-518

3-साधना,चैत1298,बंगाब्द ।

4-छेले बेला,पृ0-48-49

"ए भर बादर ,माह भादव शून्य मन्दिर मोर"--विद्यापति का यह पद रवीन्द्रनाथ को विशेष प्रिय था । इंगलैण्ड से प्रत्यागत होने पर जब वे गंगातटस्थ उद्यान में निवेशित थे,वर्षा के दिनों में प्राय: इस पद को गाया करते थे --"कतो बार घनघोर वर्षार दिने हारमोनियम यंत्र योगे विद्यापतिर "भरा बादर माह भादर," पदटिते मनेर मतो सुर बसाइया वर्षार रागिनी गाहिते वृष्टिपात मुखरित जलधाराच्छन्न मध्याह्न ख्यापार मते कटाइया दिलाम ।"[1]

विद्यापति के इस गीत में जो वेदना निश्वसित है,उसने रवीन्द्रनाथ के मर्म का स्पर्श किया था :

"किन्तु विद्यापतिर

सखिर भरा बादर माह भादर

शून्य मन्दिर मोर ।

स्पष्ट ओ बेटे काव्य बेटे । इहा केवल वर्णना वा कथार कथा मात्र नहे केवल टुकु परिष्कार उक्ति नहे,इहार मध्ये हइते गोपनेविरहवीर निश्वास निश्वसित हइया आमादेर हृदय स्पर्श करिते छे ।"[2]

रवीन्द्र प्रणीत "भानु सिंह ठाकुरेर पदावली" में विद्यापति के भावमाधुर्य एवं शिल्प सौन्दर्य का व्यापक प्रभाव अन्तर्लीन है ।

एवंविध मैथिल कोकिल विद्यापति ने बंगीय वैष्णव साहित्य के प्रांगण में सौन्दर्य-

- -

1-गंगातीरे,जीवनस्मृति,पृ0-116

2- काव्य : स्पष्ट एवं अस्पष्ट,साहित्य,पृ0-173

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

-नुभूति के एक नूतन प्रतिमान की सृष्टि की ।परिणामत: उनके भाव एवं संगीत की मधुर झंकार चैतन्योत्तर बंगीय वैष्णव काव्य में दीर्घ काल तक प्रतिध्वनित होती रही। वस्तुत: विद्यापति के हिन्दी तथा बंगला के महत्त्वपूर्ण मिलन बिन्दु है-- "तिरहुत जिसे कविशेखर की जन्मभूमि होने का सौभाग्य प्राप्त है,हिन्दी और बंगला के संगम से तीर्थ राज प्रयाग हो रहा है ।[1]

मैथिलेतर हिन्दी कविता पर विद्यापति का प्रभाव :

अच्छी कविता की एक विशेषता यह है कि वह कभी पुरानी और बासी नहीं होती । काल विशेष में रची जाने पर भी वह काल-विशेष तक सीमित नहीं होती । समय के प्रवाह में उसकी चमक और फैलती- कौंधती है । ऐसी कविताएँ आगे आने वाली कवियों से प्रेरणा-प्रभाव ग्रहण करते हुए इतिहास की एक कड़ी के रूप में उपस्थित होते हैं ।

हिन्दी कविता पर विद्यापति की छाप किसी भी भाषा में पड़ी हुई उनकी छाप से अधिक है । भक्तिकाल और रीतिकाल पर यह प्रभाव सर्वाधिक है और आधुनिक युग में छाया युग तक विद्यापति का प्रभाव है । विद्यापति के पदों की धूम पूर्वी प्रदेशों से पश्चिमी प्रदेशों तक रही है । प्राच्य अंचल में उनके पद विशेष प्रचलित हुए ।स्वाभाविक उधर के कवि उन पदों की ओर आकर्षित हों,उनसे प्रभावित हों : भले ही विद्यापति

1- श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला",बंगला के कवियों की श्रृंगार वर्णना,प्रबन्ध-प्रतिभा,पृ0-335

पी-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

का नाम पश्चिमि प्रदेशों में नहीं गूँजा-फैला हो, पर विद्यापति से प्रभावित कितने ही संत वृन्दावन आ चुके थे। रूपगोस्वामी, जयदेव जैसे संत विद्यापति से अपरिचित नहीं थे। चैतन्य महाप्रभु के वृन्दावन आने के समय विद्यापति के पद भी उनके साथ चले क्योंकि "गीतगोविन्द" के श्लोक और विद्यापति के पद उन्हें बहुत प्रिय थे। हिन्दी कविता पर विद्यापति का सर्वाधिक प्रभाव है।

वस्तुतः हिन्दी साहित्य के इतिहास में रीतिकाल अकेला काल है, जिसपर विद्यापति की श्रृंगार-कृति की छाप है। विद्यापति रीति कवियों के अगुआ हैं। वास्तविक अर्थों में रीति कविता के वे प्रारम्भकर्त्ता हैं। वे हिन्दी के प्रथम रीति कवि हैं। रीतिकाल के अतिरिक्त भक्तिकाल पर भी विद्यापति की छाप कम नहीं है। यही कारण है कि आलोचकों में यह बहस चलती रही है कि वे भक्त हैं या श्रृंगारिक। भक्ति, श्रृंगार और काम विद्यापति के पदों की विशेषता है। विनय, वन्दना तथा नचारियों में विद्यापति के यहाँ भक्ति की गंगा प्रवाहित हो रही है। "रंग- रभसे" के कवि होने तथा "राहुक बात" कहने के कारण श्रृंगार की कालिन्दी। हिन्दी में विद्यापति कृष्ण-भक्ति-धारा और श्रृंगार धारा के मूल उत्स पर विराजे हुए हैं। हिन्दी की वैष्णव कविता, भक्ति-कविता, श्रृंगारिक कविता, वीर-कविता, मुक्तक कविता तथा गीति कविता का प्रारम्भ विद्यापति की लेखनी से होता है। प्रवृत्ति और शैली -दोनों ही दृष्टियों से यह अनुपम -अद्वितीय प्रभाव है।

हिन्दी कविता पर विद्यापति का प्रभाव एक तरह से न होकर अनेक तरह से है। यह शब्द, पंक्ति और वरण रूप में है तो ध्वनि, छन्द, रस, अलंकार रूप में भी। कहीं यह वन्दना -प्रार्थना रूप में है तो कहीं विरह-मिलन और कामना रूप में। कहीं यह वयः

सन्धि,नख-शिख वर्णन,षडरितु और बारहमासा के रूप में है तो वहीं श्रृंगार-अभिसार और मान-मनुहार के रूप में ।

यह प्रभाव सखी,शिक्षा और नायक -शिक्षा का है । आश्रय आलम्बन के रूप में और हाव-भाव तथा उद्दीपन के रूप में भी यह प्रभाव है । रस की दृष्टि से मुख्यतः श्रृंगार,भक्ति और वीर-रस का प्रभाव है,अवस्था की दृष्टि से बालपन,यौवन और बुढ़ापा का । यह प्रभाव सम्पूर्ण मध्य युग में है ।

विद्यापति ने अपने कई पदों में एक ही शब्द का कई बार प्रयोग किया है । "निराला" और हिन्दी के कई कवियों में एक शब्द का यह मधुर कलरव विद्यापति के यहाँ से आया है । विद्यापति के एक वसन्त-पद में "नव" की अजस्र वर्षा है :

"नव वृन्दावन नव नव तरुगण
नव-नव ह्र विकसित फूल
नवल वसन्त नवल मलयानिल
मातल नव अलिकुल ।"

विद्यापति के इस वरज में सब कुछ पहले से नवीन है और इसका कारण वसंत का आगमन है । "निराला" की कविता "वर दे । वीणावादिनि वर दे" में नव की कई बार आवृत्ति है ।—

"नव गति,नव लय,ताल छन्द नव
नवल कण्ठ,नव जलद मन्द रव
नव नभ के नव विहग वृन्द को
नव पर,नव स्वर है ।"

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

विद्यापति के यहाँ सबकुछ पहले से नया है और निराला में सबको नवीन करने का प्रयास है । पर "नव" की नवता दोनों में है । "निराला" में शब्द-साम्य ही नहीं है,बड़ी बात यह है कि उन्होंने शब्द विशेष को एक ही पद में फैलाने अर्थात् लगातार प्रयोग करने की कला विद्यापति से सीखी है । विद्यापति के निम्न पद में "मधुर" की मधुर छटा है :

"मधुरित मधुकर पाँति,मधुर कुसुम मधुमाति ।
मधुर वृन्दावन माँझ ,मधुर-मधुर रस साज ।
मधुर युवति जनसंग, मधुर मधुर रसरंग ।
मधुर मृदंग रसाल ,मधुर मधुर करताल ।
मधुर नटन गतिभंग ,मधुर नटनी नट संग ।
मधुर मधुर रसगान, मधुर विद्यापति भान।"

" निराला" के कई ऐसे गीत हैं,जिनमें इसी प्रकार शब्द विशेष की आकर्षक-मनोरम तथा अर्थपूर्ण छटा है । चाहे वह "जिधर देखिए श्याम बिराजे" वाला गीत हो या "नील" शब्द वाला । ऐसी बात नहीं है कि यह प्रभाव केवल "निराला" के ऊपर है,तुलसीदास ने भी एकाध स्थल पर इस प्रकार की शब्द-क्रीड़ा की है । श्री भट्ट की निम्नलिखित पंक्तियों में हम इसीका प्रभाव पाते हैं :

"ब्रजभूमि मोहिनी मैं जानी ।
मोहन कुंज,मोहन वृन्दावन,मोहन जमुना प नी-
मोहन नारि सकल गोकुल की बोलति अमरत बानी
श्री भट्ट के प्रभु मोहन नागर,मोहनि राधा बानी ।"

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।
पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

इस प्रकार का प्रभाव "निराला" पर सबसे अधिक है । उन्होंने विद्यापति की कवि प्रतिभा में कालिदास, श्रीहर्ष, शैली और शेक्सपीयर से किसी प्रकार घटकर नहीं माना है।

भक्तिकाल में सूरदास और रीतिकाल में बिहारीलाल की कविता पर विद्यापति के श्रृंगारिक पदों की सबसे अधिक छाप है । सूर के यहाँ तो पंक्तियाँ तक मिल जाती है। उपमान मिल जाते हैं, और फिर अलंकार भी वही रहता है जो विद्यापति के यहाँ । रूपकातिशयोक्ति की दृष्टि से विद्यापति की ये पंक्तियाँ सूरदास के यहाँ इसी रूप में है :

"नीरे निरंजन लोचन राता ।
सिंदुर मंडित जनु पंकज-पाता।।"

विद्यापति के राधा कृष्ण का प्रेम प्रथम दर्शन से उत्पन्न प्रेम है-"दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर" । राजपथ पर यात्रा करते हुए राधा-कृष्ण के नेत्र आपस में उलझ जाते हैं - "चलल राजपथ दुहु उरझाई।" सूरदास के राधा-कृष्ण भी जब एक दूसरे को देखते हैं, तब "नैन-नैन मिलि परी ठगौरी ।"विद्यापति प्रेम और रूप के नावीन्य पर बल देते हैं और घनानन्द तथा मतिराम में रूप-प्रेम की यही नवीनता दृष्टिगत होती है ।

विद्यापति के वय:सन्धि वर्णन से हिन्दी के कम कवि प्रभावित नहीं हैं । वय: सन्धि की अवस्था में उनकी नायिका के यहाँ "सैसव जौवन दुहुँमिलि गेल" । बिहारी-लाल की नायिका का भी अपनी वय: सन्धि में यही हाल है । "छूटी न सिसुता की झलक झलक्यो जोबन अंग ।" बिहारी ही नहीं नन्ददास ने "रूपमंजरी" में यौवन और शैशव को नरेशों के रूप में देखा है :

बिहारी : "अपने तन के जानि के, जोबनि नृपति प्रवीन
स्तन मन, नैन, नितम्ब को बड़ो इजाफा कीन ।"

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

पी-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

नन्ददास : "जुबन राव जब उर पुर लयो

सिसवराज जवन बन गयो

अरन लगे तब दोऊ नरेसा ।"

विद्यापति के यहाँ पदों की चंचलता नेत्रों में आ जाती है और नन्ददास के यहाँ :

"तड़ित घना पग चचलताई

चली छबीली नैननि आई।"

विद्यापति की नायिका के नख-शिख-वर्णन और जायसी की पद्मावती के नख-शिख वर्णन की तुलना कई अर्थों में उपयोगी और रोचक है । विद्यापति की सद:स्नाता का भी प्रभाव हिन्दी कवियों पर पड़ा है । वह अपने स्तनों को भुजपाश में उड़ने के डर से बाँध रखती है :

"ते शंका भुजपासे

बान्धि धएल उड़ि जाएत अकासे ।"

सूरदास की राधा इस अर्थ में विद्यापति की नायिका की अनुजा सिद्ध होती है--

"राखति ओट कोटि जतनन करि,ढाँपत अंबर ढाँपि

खंजन मनहुँ उड़न को आतुर सकत न पंख पसारि ।"

बिहारी की नायिका पर यह असर पड़ना स्वाभाविक है ।वह"बिहँसति सकुचति सी दिए कुच आँचर बिच बाँह ।" सद:स्नाता के वर्णन में विद्यापति ने नायिका के वस्त्रों के उसके शरीर से अलग होने के कारण उसकी क्रन्दन कल्पना की है :

"ऐसन रस नहि पाओब आरा

इथे लागि रोइ गरए जलधारा ।"

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

1992

नन्ददास की नायिका के कपड़े भी अंग से अलग होने पर रोने लगती है :

"नवला निवसत तीर जब नीर चुअत बर वीर

जनु अँसुवन रोवत बसन तन बिछुरन की पीर।"

केसवदास के यहाँ की स्थिति इससे भी भिन्न नहीं है ।"सज्जल अम्बर छोड़त बने";छूटत है जल के कन घने ।"

हिन्दी कविता में परकीया प्रेम को उच्चासन पर बिठाने का कार्य विद्यापति के द्वारा सम्पन्न हुआ है । रीति कवियों का परकीया-प्रेम विद्यापति से प्रभाव अपनाकर आगे बढ़ा है । विद्यापति की नायिका "कुलकामिनी छलौं कुलटा भए गेलौं तिनकर बचन लोभाई;" कहती है । रीतिकाल में "जोगहुँ ते कठिन संजोग पर नारी को" है । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने वर्षा के मौसम में "यह पाखि पतिव्रत ताखि धरौ" की सीख दी है । विद्यापति के यहाँ कृष्ण से दूती के राधा जैसी सुन्दरी के उपभोग की सलाह देने का यही कारण है । -"जनिक एहन धनि काम कला सनि,से किय कर बिभिचारे " तथा यह कहाँ का तरीका है कि "निज धन अछइत नहि उपभोगब केवल परहिक आसे"। देव की दूती भी कृष्ण से ऐसी ही सवाल पूछती है -"रसिक कन्हाई बलि पूछन हौं आई, तुम्हें ऐसी प्यारी पाई कैसे न्यार-राखि जाती है ? विद्यापति ने हिन्दी कविता को कई रूपों में प्रभावित किया है ।दृष्टिकूट की सर्वप्रथम रचना उन्होंने की है,गीत पद्धति उन्होंने चलायी है तथा राधा और कृष्ण जैसे आश्रय-अनालम्बन प्रस्तुत किये हैं ।

आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध में विद्यापति की दृष्टि अन्य कवियों से मेल खाती है और उपमान भी कई स्थलों पर एक ही रहते है । विद्यापति जीव और परमात्मा का लहर-सागर सम्बन्ध मानते हैं :

"तोहे जनमि पुनि तोहे समाओत-

सागर लहरि समाना ।"

कबीर के विचार इसी प्रकार के है :-

"दरियाव की लहर दरियाव है जी

दरियाव और लहर में भिन्न कोयम ?

कबीर पर विद्यापति का प्रभाव अनेक प्रकार से है । कबीर ने माधव,गोपाल, जैसे शब्दों का प्रयोग भी किया है । मिथिला और काशी में बहुत दूरी नहीं है ।

विद्यापति की श्रृंगारिक कविता के अतिरिक्त भक्तिपूर्ण कविता का भी हिन्दी कविता पर प्रभाव पड़ा है । विनय और प्रार्थना रूप में यह प्रभाव कई स्थलों पर देखा जा सकता है । पुनर्जन्म में विद्यापति अपने आराध्य का ही सान्निध्य चाहते हैं :

"किय मानुस पसु पखि जे जनमिय अथवा कीट-पतंग

करम विपाके गतागत पुनि-पुनि मतिरहु तुअ परसंग ।।"

रसखान ने अपने प्रसिद्ध और बहुप्रचलित सवैया "मानुष हौं तो वही रसखान" द्वारा ऐसे ही भाव प्रकट किए हैं । तुलसीदास की राम से यह प्रार्थना है :

अब नाथ करि करुणा विलोकहु ,देहु जो वर मांगऊँ

जेहि जोनि जनमऊँ करम बस तहँ राम-पद अनुरागहुँ ।"

विद्यापति का प्रभाव तुलसीदास पर अवश्य पड़ा है । चाहे वह आंशिक ही हो । विद्यापति की गीति शैली के दर्शन "विनय पत्रिका" में किये जा सकते हैं । तुलसी की समन्वयकारी दृष्टि विद्यापति में पहले से है । विद्यापति ने हरिऔर हर की एकता के द्वारा हरिशंकरी रूप की स्थापना की है × :

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

पी-एच० डी० शोध प्रबंध

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

"भल हर भल हरि भल तुअ कला

खन पित बसन खनहि बघछला......।

तुलसीदास ने "विनय पत्रिका" के एक पद के प्रारम्भिक भाग में विष्णु और अन्तिम भाग में भगवान शिव की हरि-शंकरी रूप में स्तुति की है :

"रुचिर हरि शंकरी नाम-मंत्रावली द्वन्द्व-दुःख हरनि आनन्द खानी

विष्णु शिवलोक -सोपान सम सर्वदा वदति तुलसीदास विशद बानी।"

विद्यापति हिन्दी गीति काव्य परम्परा के जनक है । हिन्दी गीतों पर सिद्धों, नाथों के गीतों का प्रभाव न होकर विद्यापति के पदों का प्रभाव है । विद्यापति की कविता का प्रभाव अष्टछाप के कवियों से होता हुआ रीतिकालीन कवि-कलाकारों तक है । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तक विद्यापति का प्रभाव है । कवियों में सूर,जायसी,बिहारी, देव,पद्माकर,निराला पर विद्यापति के प्रभाव को देखने में विशेष दिक्कत नहीं होना चाहिए ।विद्यापति की कविता हास-विलास की है और आधुनिक कविता त्रास-संत्रास की। छायावाद युगीन कविताओं तक विद्यापति की कविता का प्रभाव स्पष्ट है । भोग की कविता होने पर भी विद्यापति की कविताओं का प्रभाव योग कविता संत कवियों तक है । हिन्दी में मुक्तक काव्यों की परम्परा चलाने का श्रेय उनको ही प्राप्त है । उनकी कविता को विपुल प्रभाव का सर्वप्रमुख कारण यह है कि वह चमत्कारी तथा हृदयहारी है । फिर उसके पुरातन होने या पढ़ने का सवाल ही कहाँ उठता है ?

"जनम अवधि हम रूप निहारल,

नयन न तिरपित भेल ।"

पी-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

कर्णाट साहित्य पर प्रभाव :

मिथिला में कर्णाट वंशीय क्षत्रियों का शासन रहा है । इसीलिए मैथिली साहित्य से कर्णाट साहित्य भी उपकृत होता रहा है । कहा जाता है कि विद्यापति से कर्णाट साहित्य के समर्थ कवि पुरन्दरदास प्रभूत प्रभावित थे । उदाहरण के लिए विद्यापति रचित स्वयं दूतिका-नायिका विषयक एक पद उद्धृत है :

"हम जुवती पति गेलाह विदेश
लगनहि बसै परोसिया कलेश
सासु दोसरि किछुओ नहि जान
आँखि रतौंधी सुनए न कान
जागहि पथिक जाए जुनि भोर
राति अन्हार गाम बड़ चोर
भमहुँ भौरन देई कोत्वाल
काहुक बचो नहि करय विचार
अधिप न कर अपराधहुँ साँति
पुरुष महत् सब हमरहि जाति

उपर्युक्त पद में स्वयं दूतिका नायिका प्रकारान्तर से आगत नायक के प्रति अपनी रमणीयता प्रकट कर रही है । वैसे विद्यापति से पहले कालिदास कृत श्रृंगारतिलक में एक श्लोक * मिलता है जिसका भाव-साम्य विद्यापति के उपर्युक्त पद से किया जा सकता है।[1]

- -

1- कालिदास का वह श्लोक इस प्रकार है :

"यामिन्येषां बहुजलदैर्बद्धभीमान्धकारा :

नीन्द्रांपातों ममपशिरस: क्लेशितै: वर्मदु:खै:

बालाबाहं मनसिजभयाद्-प्राप्तगाढ़ा प्रबंधा

ग्रामस्यचौरैमुक्त: पान्थ निद्रांजहीहि ।

पुरन्दरदास की कविता का हिन्दी अनुवाद आचार्य बलदेव उपाध्याय कृत-" भारतीय वांगमय में श्री राधा नामक पुस्तक में इस प्रकार है :

इसी समय हरि आओ रे

इसी समय तुम आओ

सास गई है पुराण सुनने

पति का मुझपर अविश्वास है

ननद बेचारी पतिगृह गई है

इसी समय हरि आओ रे

इसी समय हरि आओ ।[1]

1- रीतिकालीन कवि सुखदेव मिश्र ने स्वयं दूतिका विषयक एक छन्द की रचना इस प्रकार की है :

"ननद निनारी सासु माके सिधारी

अहै रैन अंधियारी भरी सूझत ना कर है

प्रीतम को गौन कविराजन सुहात मौन

दारुण बहत पौन लागे मेघ झर है

संग न सहेली वयस नवल अकेली

तन परि तलबेली महालागि मैन सर है

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

पी-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

भई अधिरात मेरो जियरा डेरात

जागु जागु रे बटोही यहाँ चोरन को डर है ।

मैथिली के आधुनिक कवि आरसी प्रसाद सिंह के स्वयं दूतीका भी इसी प्रकार कहती है :

आन्हर साहु विदेस पिया

जननी मुँह देखि बकऽर लगैये

पास पड़ोसक रंच भरोस ने

अंग अनंगक सर लगैये

राति विराति अन्हार घटा घन

भादव मासक डर लगैये

पाहुन आजु रहू एहि ठाम

हम एक्सरे बड़ डर लगैये ।

ब्रजादि साहित्य को मिथिला की काव्य साधना ने अनेक रूपों से प्रभावित किया है ।

महाकवि विद्यापति से ब्रजमण्डल के सम्पूर्ण कविगण प्रभावित हैं । विद्यापति का पद उदाहरण-स्वरूप प्रस्तुत है जिस में कृष्ण नामोपासना तत्परा विरह विदग्धा कृष्णमयी राधा का चित्रण हुआ है । इस पद की कुछ पंक्तियाँ इस शोध प्रबन्ध के तृतीय अध्याय में भी आ चुकी है :

"अनुखन माधव माधव सुमरति

सुन्दरि भेल मधाई ।

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

ओ निज भाव सुभावहि बिसरति

आपन गुन लुबधाई ।।

माधव अपरुब तोहर सिनेह-

अपनेहि बिरह अपन तन जारए

जिबइत भेल सन्देह ।।"

भोरहि सहचरि कातर दिठि हेरि

छल-छल लोचन पानि

अनुखन माधव माधव रटईत

आधा आधा बानि ।

राधा सँ जब पुनतहि माधव

माधव सँ जबि राधा

दारुण प्रेम तबहि नहि टूटत

बाढ़त बिरहक बाधा ।

दुहुँ दिसि दारुदहन जइसे दगध

आकुल कीट पराण

ऐसन वल्लभ हेरि सुधा मुखि

कवि विद्यापति भाने ।।

इसी का अनुकरण करते हुए सूर ने कहा :

सुनौ स्याम यह बात और कोऊ

क्यौं समुझाय कहै ।

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा ।

पी-एच० डी०, शोध प्रबंध

दुहु दिसि की रति बिरह बिरहिनी
कैसो कैदु सहै ।।
जब राधा तबही मुख माधौ
माधौ रटति रहै ।
जब माधव होय जात सकल तनु
राधा विरह दहै ।।
उभय उग्र द्वौ दारु कीट ज्यौं
शीतलता ही चहै
सूरदास अति विकल बिरहिनी
कैहुँ सुख न लहै ।।

महाकवि देव ने इस दशा का वर्णन अपने निम्नांकित दो छन्दों में इस प्रकार दिया है :

जब राधिका कान्ह को ध्यान करै ।
तब ह्वै राधिका के गुण गावै ।।
त्यौं आसुआ बरसे बरसाने को ।
पाँति लिखै लिखि राधे को ध्यावै ।।
राधे ह्वै जात घरिक मैं देव ।
सो प्रेम की पाँति लर छाती लगावै ।।
आपुहि ~~अरुझि~~ आपुहि मैं उरझै
विरुझै सुरझै समुझै समुझावै ।।

कान्हमयी वृषभानुसुता भई ।
प्रीति नई उन ई जीय जैसी।।
बानि के देव बिकानी सी डोले ।
लगै गुरु लोगन देखि अनैसी ।।
ज्यौं ज्यौं सखि बहरावति बातनि।
त्यौं त्यौं बके वह बावरी ऐसी ।।
राधिका प्यारी हमारी सौ हूँ
कहु कालिह कि बेनु बजाई मैसी ।।

महाकवि बिहारी का कथन है :

"पिय के ध्यान गहि गहि
रही वही ह्वै नारि
आपु आपु ही आरसी,
लख रीझत रिझवाई ।।

इस प्रकार विद्यापति ने पूर्ववर्ती साहित्य साधना को अभिनव रूप देकर प्रस्तुत किया ।इसका प्रभाव परवर्ती साहित्य पर दृष्टिगत होता है ।

विद्यापति की काव्य परम्परा में ही मिथिलांचल में राधा-कृष्ण विषयक प्रेम-दशा की प्रस्तुति की परिपाटी का आरम्भ हुआ । इसीलिए इस शोध-प्रबन्ध में विद्यापति और गोविन्ददास की काव्य-साधना के समकालीन और परवर्ती प्रभाव का विवेचन किया गया है ।

इसी प्रकार मैथिली के द्वितीय समर्थ कवि गोविन्ददास से अनेक प्रान्तों के कवियों ने प्रभाव ग्रहण किया । गोविन्ददास ब्रजबुलि के सर्वश्रेष्ठ कवि थे और बंगाल के अतिरिक्त आसाम आदि प्रान्तों में जो ब्रजबुलि काव्य रचित हुआ उनपर गोविन्द-दास का प्रभूत प्रभाव है ।

साहेब राम,गोस्वामी लक्ष्मीनाथ और अप्रुपदास आदि कवियों से भी अन्य प्रान्तों के कविगण प्रभावित थे ।

-:::::::::::::-

* उपसंहार *

राधा की आत्मा के प्रत्येक चेतन में दिव्य-प्रेम की अलौकिक छटा है । समर्पण और त्याग की सर्वश्रेष्ठ पार्थिव-प्रतिमा के रूप में कविगणों ने राधा के प्रेममय जीवन का निरूपण किया है ।

राधा का प्रेम महाभाव माना गया है । जिसमें स्वसुख की कामना के साहित्य के अतिरिक्त प्रिय-सुख के प्रति गहरी निष्ठा होती है । इसीलिए महाभावस्वरूपा राधा समर्थारतिवती नायिका मानी गई है ।

चैतन्य सम्प्रदायमें राधा की प्रेम दशा की जिस अलौकिक स्थिति का वर्णन हुआ है,वह स्थिति मिथिलांचल के कवि विद्यापति की काव्य-प्रतिभा से प्रभावित है । स्वयं चैतन्य महाप्रभु के पूर्वज भी मिथिलानिवासी ही माने जाते हैं । मैथिल याज्ञवल्क्य ने "वृहदारण्यकोपनिषद" में कहा है कि - "पति की कामना से प्रतिप्रिय नहीं होता है,

बल्कि आत्मा की कामना से ही पति-प्रिय होता है । यह आत्मा ही एक मात्र देखने, सुनने और मनन करने योग्य है ।" पुन: इसी उपनिषद् में आत्मा को सभी प्राणियों के लिए "मधु" कहा गया है और सभी प्राणी आत्मा के लिए मधु कहे गये हैं :-

"अयमात्मा सर्वेषां भूतानां मध्वस्य आत्मा सर्वाणिभूतानि मधुवश्य ।"

मिथिलांचल की वैष्णव साधना में आत्मतत्व की अद्वैतमूला व्याख्या हुई है । साथ ही इसकी प्राप्ति के लिए ज्ञान की अपेक्षा प्रेम की श्रेष्ठता का ही प्रतिपादन हुआ है । इसे ही मैथिल याज्ञवल्क्य ने "मधविद्या" कहा है और प्रकारान्तर से इसे कवि कोकिल विद्यापति ने —"मधुर वृंदावन माझ" मधुर-मधुर रसराज कहा है ।

मिथिलांचल की दार्शनिक साधना मुख्यत: मैथिल बोधायन के विशिष्टा द्वैतवाद से प्रभावित है । इसमें परमसत्ता की आराधना मधुर भाव से की जाती है । इसी का अनुकरण परवर्ती काल में रामानुजाचार्य आदि ने किया है । मिथिलावासियों के विषय में "श्रीमद्भागवत्" में -"द्वन्द्वैर्मुक्ता गृहेष्वापि" कहा गया है । मिथिलावासी गार्हस्थ्य मर्यादा का पालन करते हुए आत्मविद्या में विशारद माने गये हैं । योग और भोग दोनों के समन्वय के द्वारा ही यहाँ की साधना प्रतिफलित हुई है । श्रेय की सिद्धि के लिए प्रेम का परिचय आवश्यक है । दृष्ट से ही अदृष्ट की प्राप्ति होती है । इस प्रकार मिथिलावासी मूलत: प्रवृत्तिमार्गी ही रहे हैं । कालिका पुराण के अनुसार "धर्मस्य निर्णयं अर्थः मिथिलायां व्यवहारत: ।" अर्थात् मिथिला की व्यवहार पद्धति विश्व का धर्म है । याज्ञवल्क्य ने धर्म को भी मधु की संज्ञा दी है और मैथिल उदयन ने "लक्षणावली" में विहित क्रिया-साध्य पुरुष के गुणों को धर्म कहा है ।

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी०-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

इस प्रकार मिथिलांचल की संस्कृति प्रकृतिवादी ही रही है । राजा विदेह, गौतम, याज्ञवल्क्य, उदयन इस संस्कृति के कुशल व्यवहारकर्त्ता माने जाते हैं । योग और भोग के समन्वय के लिए कवियों को राधा-कृष्ण का व्यक्तित्व सर्वथा सार्थक जान पड़ा। कृष्ण को पुरुषोत्तम कहा गया जिनमें रक्षण की अपेक्षा रंजन का ही प्राधान्य है । इसीलिए उन्हें लीला पुरुषोत्तम भी कहा जाता है । राधा उनकी आह्लादिनी शक्ति मानी गई है । राधा का शुद्धत्व इसी में है कि उनके द्वारा कृष्ण की सर्वश्रेष्ठ आराधना की जाती है । मिथिलांचल की संस्कृति में राधा कृष्ण की प्रीति के इसी रूप का समादर किया गया । वैदिक संस्कृति की सभी विशेषताएँ मिथिलांचल में देखने को मिलती है । शतपथ ब्राह्मण (मैथिल याज्ञवल्क्य प्रणीत ग्रंथ) में विवाहिता को "सान्चोढाहिनी" कहा गया है । विवीह की अपेक्षा उद्वह श्रेष्ठ है । विवाह में जहाँ पाणिग्रहण होता है, वहाँ उद्वाह में आत्म ग्रहण होता है । मिथिलांचल की संस्कृति में पति को पत्नी की आत्मा या प्राणों का पति कहा गया है । विद्यापति ने राधा की जिस प्रेममयी स्थिति का वर्णन किया है, उसमें इसी आदर्श की व्यंजना हुई है । विद्यापति के पश्चात् मिथिलांचल के गोविन्ददास नामक कवि की रचना में भी राधा-कृष्ण प्रेम की यही दशा वर्णित हुई है । इन कवियों की साधना ने ब्रज-मण्डल और पूर्वांचल के अधिकांश कृष्ण-भक्त कवियों को प्रभावित किया । कर्णाट-साहित्य पर भी इन कवियों का प्रभाव परिलक्षित होता है।

डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने विद्यापति, चण्डीदास और सूरदास की राधा

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी०-एच०डी०, शोध प्रबन्ध

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा।

पी०-एच० डी०, शोध प्रबन्ध

का वर्णन करते हुए लिखा है—" सूर की राधा आदि से अन्त तक सरल बालिका है । उसके प्रेम में चण्डीदास की राधा की तरह पग-पग पर सास-ननद का डर नहीं और विद्यापति की किशोरी राधा की तरह रुदन में हास और हास में रुदन की चातुरी नहीं।"

वस्तुतः विद्यापति की राधा में रुदन में हास और हास में रुदन की चातुरी है । प्रेमजन्य यही वैचित्र्य तो मिथिला की संस्कृति की विशेषता है । विद्यापति के पश्चात् मिथिला में जो राम और सीता विषयक मधुर भावापन्न रचनाएँ मिलती हैं—उनमें भी प्रेम का यही स्वरूप दिखलाई देता है । इसीलिए तो परवर्तीकाल में मिथिलावासी योगिराज साहेब राम और लक्ष्मीनाथ परमहंस की राधा कृष्ण और सीताराम विषयक रचनाएँ इन्हीं विशिष्टताओं से पूर्ण मिलती है ।

मिथिला की संस्कृति की दूसरी विशेषता है जीवन के दुःख को सहर्ष स्वीकार करना । दाम्पत्य जीवन में वियोग का सर्वाधिक महत्त्व है । सीता और राधा के जीवन में दुख की सर्वाधिक स्वीकृति है । राधा की वियोग दशा को महाभाव कहा गया है। इसीलिये वियोगजन्य वैचित्र्य का वर्णन भी राधा विषयक रचनाओं में सर्वाधिक मिलता है। अभी भी मिथिलांचल में राधा -कृष्ण विषयक रचनाओं में राधा -कृष्ण के संयोग की अपेक्षा वियोग के गीत ही ज्यादा गाये जाते हैं । वृन्दावन और मिथिला दोनों की साधना ही मधुर मानी गयी है । मधुर भाव वियोग दशा में ही अधिक पुष्ट होती है । मिथिला

की सम्पूर्ण व्यवहार पद्धति उपासना युक्त है । इस उपासना का पूर्णप्रतिफलन राधोपासना के रूप में ही प्राकट्य होता है । प्रेम की यह एकनिष्ठता आधुनिक काल में मधुप, राजलक्ष्मी, जानकी वल्लभ शास्त्री, डा० रमाकान्त पाठक आदि की राधा में भी देखने को मिलती है ।

****